सतपुड़ा की अनूठी खेती पद्धति है उतेरा

पेज 13 से आगे

जिला गजेटियर के अनुसार पहले इस इलाके में मिलवां फसलें होती थी। जिसमें मिट्टी में उपजाऊपन बनाए रखने के लिए फल्लीवाले अनाज बोए जाते थे। अलग-अलग अनुपात में मिलवां फसलें बोई जाती थी। गेहूं और चना मिलाकर बिर्रा बोते थे। तिवड़ा और चना मिलाकर बोते थे। कपास, तुअर, तिल, कोदो और ज्वार मिलवां बोते थे। किसान यह भलीभांति जानते थे फल्लीदार फसलें मिट्टी को उर्वर बनाती हैं और उत्पादन बढ़ाने में मददगार होती हैं।

कई फसलें एक साथ बोने से पोषक तत्वों का चक्र बराबर बना रहता है। अनाज के साथ फलियोंवाली फसलें बोने से नत्रजन आधारित बाहरी निवेशों की जरूरत कम पड़ती है। उतेरा पद्धति के बारे में किसानों की सोच यह है कि अगर एक फसल मार खा जाती है तो उसकी पूर्ति दूसरी फसल से हो जाती है। जबकि नकदी फसल में कीट या रोग लगने से या प्राकृतिक आपदा आने से पूरी फसल नष्ट हो जाती है जिससे किसानों को भारी नुकसान होता है। हाल ही में यहां सोयाबीन की फसल खराब होने से 3 किसानों ने आत्महत्या की है। मिश्रित और मिलवां फसलें एक जांचा परखा तरीका है। इसमें फसलें एक दूसरे को फायदा पहुंचाती हैं। कुछ साल पहले हर घर में बाड़ी होती है जिसमें उतेरा की ही तरह मिलवां फसलें हुआ करती थीं। बाड़ी में घरों के पीछे कई तरह की हरी सब्जियां और मौसमी फल और मोटे अनाज लगाए जाते थे। जैसे भटा, टमाटर, हरी मिर्च, अदरक, भिंडी, सेमी (बल्लर), मक्का, ज्वार आदि होते थे। मुनगा, नींबू, बेर, अमरूद आदि बच्चों के पोषण के स्त्रोत होते थे। इसमें न अलग से पानी देने की जरूरत थी और न ही खाद। जो पानी रोजाना इस्तेमाल होता था उससे ही बाड़ी की सब्जियों की सिंचाई हो जाती थी। लेकिन इनमें कई कारणों से कमी आ रही है।

कुल मिलाकर, जंगल में रहनेवाले लोगों की जीविका उतेरा खेती और जंगल पर निर्भर होती है। खेत और जंगल से उन्हें काफी अमौद्रिक चीजें मिलती हैं, जो पोषण के लिए नि:शुल्क और प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है। ये सभी चीजें उन्हें अपने परिवेष और आसपास से मिल जाती हैं। जैसे बेर, जामुन, अचार, आंवला, महुआ, मकोई, सीताफल, आम, शहद और कई तरह के फल-फूल, जंगली कंद, और पत्ता भाजी सहज ही उपलब्ध हो जाते है। यह सब पोषण और भोजन का प्रमुख स्त्रोत हैं। यानी खेती एक जीवन पद्धति है जिसमें जैव विविधता का संरक्षण भी होता है। मिट्टी, पानी और पर्यावरण का संरक्षण होता है।

यानी हमारे देश के अलग-अलग भागों में परिस्थति, आबोहवा और मौसम के अनुकूल परंपरागत खेती की कई पद्धतियां प्रचलित हैं। कहीं सतगजरा (7 अनाज), कहीं नवदान्या(9 अनाज) तो कहीं बारहनाजा(12) की खेती पद्धतियां हैं। इनकी कई खूबियां हैं। इससे कीटों की रोकथाम होती है। मिट्टी का उपजाऊपन बना रहता है। खाद्य सुरक्षा होती है। यह सघन खेती की तरह है, जिसमें भूमि का अधिकतम उपयोग होता है।

चूंकि अलग-अलग समय में फसलें पकती हैं, इसलिए परिवार के सदस्य ही कटाई कर लेते हैं। इस कारण न तो अतिरिक्त महंगे श्रम की जरूरत पड़ती है और न ही हारवेस्टर की। जिससे ग्लोबल वार्मिंग का खतरा है। यानी यह परंपरागत खेती खाद्य सुरक्षा, मिट्टी के संरक्षण, पषुपालन में मददगार, जैवविविधता व पर्यावरण का संरक्षण सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। यह खेती की सर्वोत्तम विधि है जिसका कोई विकल्प अब तक नहीं है।

(इंक्लूसिव मीडिया फैलोशिप 2011 के तहत यह रिपोर्ट लिखी गई है)

19 March, 2012, Daily Chhattisgarh, Raipur